P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-8* ISSUE-9* May- 2021
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

उत्तर भारत के मध्यकालीन निर्गुण संतों का समाज पर वैचारिक प्रभाव

Ideological Impact of Medieval Nirguna Saints of North India on Society

Paper Submission: 17/05/2021, Date of Acceptance: 23/05/2021, Date of Publication: 25/05/2021

रमा यादव
शोधार्थिनी,
इतिहास विभाग,
मंगलायतन यूनीवर्सिटी
अलीगढ, उत्तर प्रदेश, भारत

शगुफ्ता परवीन
असिस्टेंट प्रोफेसर,
इतिहास विभाग,
इन्स्टीट्यूट ऑफ ह्मयूमैनटीज्
मंगलायतन यूनीवर्सिटी,
अलीगढ, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश

भारत के इतिहास में मध्ययुग सामाजिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक परिवर्तनों का कालखण्ड था। तत्कालीन समाज में व्याप्त सामाजिक तथा धार्मिक विषमताओं के कारण समाज में असुरक्षा तथा भय का वातावरण था। आमजन इस प्रकार की सामाजिक जड़ता तथा धार्मिक अविश्वास की वैचारिक सोच से बाहर निकलने का प्रयास कर रहा था। ऐसी उहापोह की स्थिति में तत्कालीन उत्तर भारत के निचले समाज के हाशिए से उठकर संत कवि तथा सुधारकों ने अपनी वाणियों से समाज में व्यापक परिवर्तनों को लाने का प्रयास किया। इस वैचारिक सोच की परिधि में पीड़ित आम जन था जिसके जीवन में समग्र परिवर्तन लाकर एक समतामूलक समाज की पुर्नस्थापना का संकल्प समाहित था। यह एक दीर्घ कालिक सामाजिक एवं धार्मिक परिवर्तनों का शंखनाद था जिसमें एक आम व्यक्ति के अस्तित्व को सर्वोपरि मानने की भावना सर्वोपरि था। सामाजिक न्याय की स्थापना तथा शोषण, आडम्बर, अंधविश्वास, मिथ्या तथा अवैज्ञानिक परम्पराओं को समाप्त करने का लक्ष्य एक व्यावहारिक संदेश का वाहक बना। समाज के निचले पायदान पर खड़े व्यक्ति, महिलाओं तथा शूद्रों के जीवन में सामजिक परिवर्तनों का उदघोष का स्वर गूँज रहा था। मध्यकाल के निर्गुण संतों की परम्परा का आरम्भ कबीर से हुआ। तत्पश्चात् नानक, दादू, रैदास, मलूकदास, पलटूदास, चरनदास ने अपनी शिक्षाओं को समाज सापेक्ष बनाकर जनसंवेदना की अनुभूति को स्पर्श किया। इन संतों की शिक्षाओं में संकीर्णता नहीं थी। धर्म की सहज तथा वैज्ञानिक व्याख्या को तर्क संगत बनाकर आमजन की भाषा में प्रस्तुत करके एक व्यापक सामाजिक परिवर्तन के मार्ग को प्रशक्त किया गया था।

The Middle Ages was a period of social, religious and cultural changes in the history of India. There was an atmosphere of insecurity and fear in the society due to the social and religious inequalities prevailing in the society. The common man was trying to get out of this kind of social inertia and ideological thinking of religious distrust. In such a state of euphoria, rising from the margins of the lower society of the then North India, saint poets and reformers tried to bring about wide changes in the society through their speeches. In the periphery of this ideological thinking, the victim was the common man, whose resolve to restore an egalitarian society by bringing a total change in his life was contained. It was a concoction of long-term social and religious changes in which the feeling of the existence of a common man as paramount was paramount. The goal of establishing social justice and ending exploitation, pomp, superstition, false and unscientific traditions became the carrier of a practical message. The voice of social change was echoing in the lives of the people standing at the bottom of the society, women and Shudras. The tradition of Nirguna saints of medieval times started with Kabir. After that Nanak, Dadu, Raidas, Malukdas, Paltudas, Charandas touched the feeling of public sentiments by making their teachings relative to society. There was no narrowness in the teachings of these saints. By making the simple and scientific explanation of religion rational and presented in the language of the common man, the path of a comprehensive social change was strengthened.

मुख्य शब्द : सामाजिक न्याय, आमजन, अविश्वास, रूढ़ियाँ, परम्पराएं, विभेद, शोषण, शूद्र, महिला, जाति, वर्ण, अस्पृश्यता, निर्गुण।

Social Justice, Common Man, Mistrust, Customs, Traditions, Discrimination, Exploitation, Shudra, Women, Caste, Varna, Untouchability, Nirguna.

प्रस्तावना

मध्यकाल का तत्कालीन भारतीय समाज धार्मिक अंधविश्वास, शोषण, थोथी परम्पराओं तथा सामाजिक दृष्टि से मानवताहीन व्यवस्था का एक दुर्भाग्यपूर्ण परिच्छेद था। एक ओर जहाँ तर्क, संयम, सरलता तथा सभी के प्रति सद्भाव को बढ़ाने के प्रयास किये जा रहे थे, वही घृणा, कटुता तथा मिथ्या आचरण में आबद्ध समाज संस्थागत परिवर्तनों का इच्छुक था। ज्ञान का सही मार्ग नहीं मिल रहा था। एक आमजन विस्मय के भाव में यह नहीं सोच पा रहा था कि वह क्या करे, कहां और किस प्रकार अपने जीवन का निर्वाह कर सके। ऐसी असामान्य सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों में समाज को सत्य, वैज्ञानिक तथा आडम्बरहीन जीवन दर्शन की एक क्रान्तिकारी सोच को लेकर कुछ संत सामने आये। इस कड़ी में कबीर ने उत्तर भारत के भक्ति चिन्तन को एक दिशा प्रदान की। कबीरदास न तो सन्यासी थे और न ही भिक्षु। सूफियों की भॉति उन्होंने गृहस्थ जीवन व्यतीत किया। वह गैर समझौतावादी संत थे। कबीर ने हिन्दू तथा मुस्लिम समाज में व्याप्त कुरीतियों तथाा आडम्बरों की आलोचना की। उन्होंने एकेश्वरवाद का समर्थन किया। सामाजिक विभेद को सिरे से नकारा। उन्होंने संस्थागत सामाजिक तथा धार्मिक व्यवस्था को अस्वीकार किया था।

''पोथीपढ़ि पढि, जग मुआ पंडितभया न कोय,
एके अक्षर पीव का पढ़े सु पंडित होय।।''

तत्कालीन हिन्दू समाज में मूर्ति पूजा, प्रचलित थी। धार्मिक आडम्बर तथा अन्धविश्वास बढ़े हुए थे। जाति व्यवस्था के कड़े बंधन थे। समाज में असमानता तथा शूद्र एवं स्त्रियों की स्थिति शोचनीय थी। कई प्रकार की सामाजिक कुरीतियों जैसे बाल विवाह तथा पर्दा प्रथा का प्रचलन था। तत्कालीन मुस्लिम समाज भी कई वर्गो मे विभक्त था। इन संतों ने धार्मिक स्वतन्त्रता को तत्कालीन समाज के निचले पायदान से जोड़ने का यह संकल्प किसी प्रकार के पूर्वाग्रह में आबद्ध नहीं था। समाज के प्रासंगिक सामाजिक तथा धार्मिक प्रसंगों को अपने शिक्षाओं में यथोचित स्थान देकर आत्मीतता का बोध कराया।

सामाजिक एवं धार्मिक सुधारों को सहज बनाकर ईश्वर प्राप्ति के सही मार्ग को प्रशस्त किया। इस प्रकार इन निर्गुण संतो ने एक सत्य निष्ठ मार्ग का आश्रय लेकर इस मायावी संसार से मुक्ति प्राप्त करने का सहज मार्गदर्शन किया। इन संतों ने धर्म तथा दर्शन की गम्भीरता को छोड़कर इसकी सरल रूप में व्याख्या की। एक प्रकार से यह समय से आगे की प्रासंगिक सोच थी जिसमें समाज सापेक्ष अन्तर्दृष्टि समाहित थी। इसकी व्यापक परिधि में एक आम जन, स्त्री तथा निम्न वर्ग ही प्रमुख था। फलस्वरूप, बड़ी संख्या में तत्कालीन ऐसे वर्ग के लोग इन निर्गुण सन्तों के अनुयायी बने।

मध्यकालीन निर्गुण संतो ने समाज में हिन्दू–मुस्लिम एकता पर बल दिया। कबीर की भॉति दादू ने भी धार्मिक अलगाव को समाप्त करने का संदेश दिया।

'' दादू ना हम हिन्दू होहिंगे। न हम मुसलमान।।
षट दरखन में हम नाहिं। हम राते रहमान।।

मध्यकालीन सन्तों ने समाज में व्याप्त जाति प्रथा में बंधनों को समाप्त करने तथा सामाजिक न्याय को स्थापित करने का संदेश दिया। निर्गुण संत मलूकदास के शब्द प्रासंगिक हैः–

'' मुरसिद मेरा दिल दरियाई, दिल गहि अंदर खोजा।
जा अन्दर में सत्तर काबा, मक्का तीसो रोजा।।[1]

इन निर्गुण संतो ने ईश्वर को सर्वव्यापी माना। जड़ चेतन सभी में उसी एक ईश्वर की व्याप्त को माना। सभी निर्गुण सन्तों ने स्थूल शरीर और संसार को निःसार मानते हुए सूक्ष्म शरीर (मन) तथा कारण शरीर (आत्मा) को अत्याधिक महत्व दिया। निर्गुण संत मलूकदास ने आत्मा के महत्व को कुछ इस प्रकार अपने दोहे में प्रस्तुत कियाः–

मूरत पूजैं बहुत मति, नित नाम पुकारैं।
कोटि कसाई तुल्य हैं, जो आतम मारैं।[2]

शोध कार्य का उद्देश्य

शोधार्थिनी ने विषय की प्रकृति के अनुरूप अपने शोध के उद्देश्यों को इस प्रकार रेखांकित किया हैं :–

1. निर्गुण संत परम्परा के उद्भव एवं विकास का अध्ययन करना।
2. मध्यकालीन समाज की सामाजिक तथा धार्मिक स्थिति का अध्ययन करना।
3. मध्यकालीन निर्गुण संतो के सामाजिक दर्शन में निहित मूलभूत तत्वों का अध्ययन करना।
4. मध्यकालीन निर्गुण संतो की शिक्षाओं का तत्कालीन समाज पर प्रभाव का अध्ययन करना।
5. मध्यकालीन निर्गुण संतो की शिक्षाओं का वर्तमान में प्रासंगिकता का अध्ययन करना।

साहित्यावलोकन

शोधार्थिनी ने विषय की व्यापकता तथा गम्भीरता को देखते हुए सम्बन्धित साहित्य का व्यापक आलोचनात्मक अध्ययन करके निष्कर्ष को मौलिक, वैज्ञानिक तथा व्यावहारिक बनाने का प्रयास किया है।

चतुर्वेदी, परशुराम, उत्तरी भारत की सन्त परम्परा, 1972, भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद। मध्यकालीन निर्गुण सन्तों के जीवन, साहित्य शिक्षाओं तथा पंथ परम्परा के प्रसार पर विस्तृत लेखन कार्य किया गया है। लेखक ने विभिन्न सन्तों की वाणियों के तत्कालीन समाज पर प्रभाव को भी रेखांकित किया है। यद्यपि इस ग्रन्थ में स्रोतों के सन्दर्भ पर्याप्त नहीं है।

बड़थवाल, पीताम्बर दत्त, (1972), हिन्दी काव्य में निर्गुण सम्प्रदाय (अंग्रेजी से अनुवाद) अवध पब्लिशिंग हाउस, लखनऊ। निर्गुण सम्प्रदाय के सन्तों के चिन्तन पर आलोचनात्मक व्याख्या इस डी0लिट0 शोध प्रबन्ध में की गई है। इस पुस्तक में लेखक ने हिन्दी साहित्य के विकास में मध्यकालीन निर्गुण संतों की वाणियों की व्यापकता तथा प्रभाव का उल्लेख किया है। साथ ही विभिन्न निर्गुण संतों के जीवन तथा कार्यों का भी उल्लेख किया गया है।

रिजवी, एस0ए0ए0 (1978) ए हिस्ट्री ऑफ सूफिज्म इन इंडिया (2 भाग), मुंशीराम मनोहर लाल, दिल्ली। भारत में सूफी विस्तृत प्रस्तुतीकरण किया गया है। सूफी सम्प्रदाय का तत्कालीन समाज पर क्या प्रभाव पड़ा तथा हिन्दू मुस्लिम एकता के लिए सूफी सन्तों ने

क्या प्रयास किए। लेखक ने तत्कालीन मूल फारसी तथा उर्दू स्रोतों का प्रामाणिकता के साथ उपयोग किया है।

शुक्ल, आचार्य रामचन्द्र (2005) – हिन्दी साहित्य का इतिहास, मलिक एण्ड कम्पनी, दिल्ली। हिन्दी साहित्य के विकास में भक्तिकालीन निर्गुण तथा सगुण संतों तथा कवियों की रचनाओं का अध्ययन इस ग्रन्थ की मूल विशेषता है। लेखक स्वयं में हिन्दी के प्रख्यात समालोचक रहे हैं, इस दृष्टिकोण से निर्गुण सन्तों तथा सगुण उपासकों के साहित्य की गहराई से विवेचना की गई है।

इराकी, शहाबुद्दीन (2012) मध्यकालीन भारत में भक्ति आन्दोलन सामाजिक एवं राजनीतिक परिप्रेक्ष्य चैखम्बा सुरभारतीय प्रकाशन, वाराणसी। इस पुस्तक में लेखक ने मध्यकालीन भरतीय समाज में भक्ति आन्दोलन को सामाजिक, धार्मिक तथा राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में विवेचित–विश्लेषित करने का सफल प्रयास किया गया है। लेखक इन इस पुस्तक में भक्ति आन्दोलन तथा सूफीवाद दोनों के विषय में गहन अध्ययन किया है। फलस्वरूप, निर्गुण संतों के चिन्तन, तथा तत्कालीन समाज पर प्रभाव का अध्ययन किया गया है। भक्ति साहित्य के ऐतिहासिक महत्व को भी प्रस्तुत किया गया है।

श्रीवास्तव, तृप्ति, भक्ति परम्परा का प्राच्यवादी पाठ, राष्ट्रीय पुस्तक न्सास, भारत सरकार, नई दिल्ली (2015)। औपनिवेशिक भारत में देश की विविध भाषा स्रोतों का अंग्रेजी में अनुवाद किया गया है। जिज्ञासु ब्रिटिश प्रशासकों था प्राच्यविद्वानों ने भारी की भाषा तथा उसके विविध स्रोतों का काफी अध्याय करके टीकाएं लिखीं। यद्यपि इस प्रकार के लेखन में हिन्दी के भक्ति साहित्य को नकारात्मक दृष्टिकोण से प्रस्तुत करने का प्रयास इन विदेशी लेखकों द्वारा किया गया। वह कृति उत्तर आपैनिवेशिक समाज को परम्परा के प्रति बैठी हीन भावना से मुक्त करने तथा आत्मसम्मान का बोध करने का एक सहज उपक्रम है।

Callewart, Winand, M. (2020), Nirgun Bhakti Sagar; Devotional Hindi Literature : A critical edition of The Five works of Dadu, Kabir, Namdev, Raidar, and Hardas, Manohar Publishers & Distributors New Delhi. इस ग्रंथ के लेखक ने भारत के अनेक धार्मिक स्थानों की यात्रा की है तथा भारत में रहकर मध्यकालीन निर्गुण संतों के साहित्य का गहन अध्ययन भी किया है। इस ग्रंथ के सम्पादन के लिए मध्यकालीन निर्गुण संतों की पांडुलिपियों को भारत के अनेक स्थानों से प्राप्त किया गया है। इस ग्रंथ में इन संतों की वाणियों तथा भजनों की गायन शैली पर भी प्रकाश डाला गया है। साथ ही तत्कालीन समाज तथा वर्तमान समय में इन भजनों तथा वाणियों का क्या प्रभाव पड़ा, इस सबका प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुतीकरण भी किया गया है। यह प्रकाशन दो खण्डों में उपलब्ध है।

सिंह, ममता (2014), सोलहवीं शताब्दी का उत्तर भारतीय समाज एवं भक्ति आन्दोलन एक ऐतिहासिक अध्ययन, क्षत्रपति शाहूजी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर का शोध प्रबन्ध।

इस शोध प्रबन्ध में उत्तर भारत के समाज की स्थिति तथा भक्ति आन्दोलन के संतों द्वारा समाज में व्याप्त कुरीतियों जैसे जाति प्रथा, नारी उपेक्षा, धर्म का गलत आचरण, पाखण्ड, मूर्ति पूजा, शोषण तथा सामाजिक धार्मिक अन्यायों के विरोध स्वरूप अपनी वाणियों में सामाजिक समानता तथा धार्मिक सहिष्णुता के संदेशों को समाहित किया।

शोधार्थी ने सगुण तथा निर्गुण परम्पराओं के संतों के साहित्य का व्यापक अध्ययन किया है। शोध प्रबन्ध में मूल साहित्य प्रयोग करके संतों की शिक्षाओं को प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत किया गया है । जैसे कबीर, नानक, रैदास, नामदेव इत्यादि।

निष्कर्ष

सभी मध्यकालीन सन्त प्रायः उत्पीड़ित, दलित तथा निम्न वर्गो से थे। उन्होंने उस वर्ग की पीड़ा, भूख, प्यास, अपमान, तिरस्कार को अपनी वाणियों में प्रमुख स्थान दिया। साथ ही दीन पर दया करने, पीड़ियों की पीड़ा हरने को सच्ची भक्ति और वास्तविक मानव धर्म कहा।

हिन्दू मुस्लिम के साम्प्रदायिक मतान्तरों में मनुष्य और मनुष्यता को विभक्त करने वालों को इन संतो ने कड़ा सदेश दिया। धर्म के बाह्य आडम्बरों तथा पूजा–स्थलों के महत्व को नकारा। उन्होंने जीवों पर दया के बिना सब तीर्थ–यात्रा, धर्म–कर्म को नकारा।

इन निर्गुण सन्तों ने किसी रूढ़ विधि या परिपाटी से मुक्त रहकर ही अपनी भक्ति को अभिव्यक्ति दी। इस कारण शास्त्रीय पद्धतियाँ एवं सांगोपांग किसी विषय का क्रमिक निर्वाह रेखांकित करना संभव नहीं रहा है। इन सन्तों के भाव– प्रवाह में सहज रूप में जो कुछ सम्मिलित होता गया, वही प्रकट रूप में संजो लिया गया है। इन निर्गुण संतो ने तत्कालीन समाज में आस्था को विश्वास से जोड़ा। ज्ञान को ईश्वर माना। साम्प्रदायिकता का विरोध करके सभी को एक साथ रहने का सामाजिक संदेश दिया जो वर्तमान में भी प्रासंगिक है। जाति, वर्ग, वर्ण तथा धर्म के स्थान पर ईश्वर भक्ति को सर्वोपरि माना। इन संतों की सामाजिक न्याय तथा समतामूलक समाज की स्थापना की अवधारणा का भाव आज भी प्रासंगिक है। इन निर्गुण संतों की शिक्षाओं की सभी–कालखण्डों में प्रासंगिकता रही है और रहेगी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *मजूमदार, आर0सी0, दिल्ली सल्तनत, भारतीय विद्या भवन, बम्बई (1960)।*
2. *ताराचन्द, इन्फ्लुयन्स ऑफ इस्लाम ऑन इंडियन कल्चर, इंडियन प्रेस, इलाहाबाद (1663)।*
3. *प्रसाद, ईश्वरी ए शार्ट हिस्ट्री ऑफ मुस्लिम रूल इन इंडिया, इंडियन प्रेस, इलाहाबाद (1965)।*
4. *चतुर्वेदी, परशुराम, उत्तरी भारत की सन्त परम्परा, भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद (1972)।*
5. *बड़थवाल, पीताम्बर दत्त, हिन्दी काव्य में निर्गुण सम्प्रदाय (अंग्रेजी से अनुवाद) अवध पब्लिशिंग हाउस, लखनऊ, (1972)।*
6. *दास गुप्ता, एस0एन0, ए हिस्ट्री ऑफ इंडियन फिलोसफी, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, (1975) ।*

7. *रिजवी, एस0ए0ए0, ए हिस्ट्री ऑफ सूफिज्म इन इंडिया (2 भाग), मुंशीराम मनोहर लाल, दिल्ली, (1978)।*
8. *शुक्ल, आचार्य रामचन्द्र – हिन्दी साहित्य का इतिहास, मलिक एण्ड कम्पनी, दिल्ली, (2005)।*
9. *18. इराकी, शहाबुद्दीन, मध्यकालीन भारत में भक्ति आन्दोलन सामाजिक एवं राजनीतिक परिप्रेक्ष्य चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, (2012) ।*
10. *Rajagopalachary and Rao, Damodar, K., Edited, Bhakti Movement And literature; Re-farming a Tradition, Rawat Publications, New Delhi (2019).*
11. *Callewart, Winand, M., Nirgun Bhakti Sagar; Devotional Hindi Literature : A critical edition of The Five works of Dadu, Kabir, Namdev, Raidar, and Hardas, Manohar Publishers & Distributors New Delhi (2020).*
12. *सिंह, ममता, सोलहवीं शताब्दी का उत्तर भारतीय समाज एवं भक्ति आन्दोलन एक ऐतिहासिक अध्ययन, क्षत्रपति साहूजी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर का शोध प्रबन्ध, (2014) ।*
13. *ताराचन्द : उत्तर भारत की सन्त परम्परा, इलाहाबाद, 1958।*
14. *डा0 राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक आर्थिक मध्यकालीन, प्रभार साम्राज्य एवं संस्कृति इलाहाबाद, 1997।*
15. *श्रीवास्तव, आर्शीवादी लालः मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, आगरा, 1993।*